किसी यात्रा का वर्णन

Kisi Yatra ka Varnan

ज्ञानेनहीना: पशुभि: समाना:।

अर्थात ज्ञान से हीन मनुष्य पशु के समान है।

अध्ययन, बड़ों का सान्निध्य, सत्संग आदि ज्ञान-प्राप्ति के साधन कहे जाते हैं। इनमें अध्ययन के बाद यात्रा का स्थान प्रमुख है। यात्रा के माध्यम से विविध प्रकार का प्रत्यक्ष ज्ञान बड़ी ही सहजता के साथ तत्काल प्राप्त हो जाता है। यही कारण है कि यात्रा का अवसर हर कोई पाना चाहता है। प्रत्येक मानव अपने जीवन में छोटी-बड़ी किसी-न-किसी प्रकार की यात्रा अवश्य ही करता है।

मुझे शिक्षा-प्राप्ति के लिए त्रिशूल पर बसी विश्वसनाथ की नगरी काशी ठीक जगह जंची, जहां इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग से लेकर हर तरह की विद्या की शिक्षा देने के लिए हिंदू विश्वविद्यालय का विशाल द्वार सबके लिए खुला है। भारतीय संस्कृति की तो बात ही क्या, ऋज्वेद की ऋचाओं से लेकर चौपंचासिका तक के पढ़ानेवाले अनेक प्रकांड पंडित भरे पड़े हैं। बहुत सोच-विचार के बाद मैंने काशी जाने का निश्चय कर लिया था।

मैं उन दिनों लगभग प्रदंह साल का था। मुहूर्त देखा गया। मैं बड़ी उत्कंठा से उस दिन की प्रतीक्षा करता रहा जिस दिन मुझे यात्रा पर रवाना होना था। आखिर वह दिन आया। मैं शामवाली गाड़ी से काशी के लिए चल पड़ा। पिताजी मुझे काशी पहुंचाने साथ आ रहे थे। स्टेशन से ज्यों ही गाड़ी चली कि मेरे मन की आंखों में उज्जवल भविष्य के सुनहरे दृश्य झलमलाने लगे। उन दृश्यों को देखते-देखते ही मैं सो गया।

पिताजी ने जगाया, तब समस्तीपुर का जंक्शन बिजली के लट्टूओं की रोशनी में जगमगा रहा था। एक बार आंखें चौंधिया गई। गाड़ी अपने नियत समय से पैंतीस मिनट देर से आई, सो भी गलत प्लेटफॉर्म पर। बड़ी दौड़-धूप करके और कुली को अतिरिक्त पैसे देकर जैसे-तैसे हम प्रयास फास्ट पैसेंजर के डिब्बे में बैठ पाए।

सवेरे छपरा में हाथ-मुंह धोए। उसके बाद मैं तो जब-तब कुछ-न-कुछ खाता ही रहा, परंतु पिताजी ने रास्ते भर कुछ नहीं खाया। गाड़ी चलती रही, दिन भी ऊपर उठता गया। औड़िहार में आकर पिताजी ने खोवा खरीदा। मुझे खाने को दिया, जो बहुत अच्छा लगा। फिर तो देखते-देखते ही पूरी गाड़ी खोवे के बड़े-बड़े थालों से भर गई। मालूम हुआ, यह सारा खोवा काशी जा रहा है और मैं भी काशी जा रहा हूं। एक बार फिर मन झूम उठा।

औड़िहार से गाड़ी चल पड़ी एकाध स्टेशन बाद प्राय: कादीपुर स्टेशन से ही सावन का मेह बरसने लगा। अलईपुर स्टेशन पर गाड़ी पहुंची, तब मूसलधार वर्षा होने लगी। पानी थमने पर सामान साहित भीगे हुए पिताजी और मैं रिक्शे पर बैठकर नगर की ओर चले।

नागरी प्र्रचारिणी सभा, टाउन हॉल, कोतवाली, बड़ा डाकघर, विशश्वरगंज की सट्टी, मैदागिन का चौराहा आदि देखते हुए चौक पहुंच गए। वहीं पर पास में ही कचौड़ी गली में पिताजी के एक मित्र रहते थे। उन्हीं के घर सामान रखकर हम मणिकर्णिका घाट पर स्नान करने चले गए। शाम को विश्वनाथ की आरती देखकर माता अन्नपूर्णा के दर्शन किए, फिर दशाश्वमेध घाट तक आए।

दशश्वमेध तथा आस-पास के सुंदर और विशाल भवनों को देखकर मैं चकित रह गया। वहां हजारों नर-नारी स्नान, पूजा-पाठ में लगे थे तथा नावों पर बैठे लोग इधर-उधर सैर कर रहे थे। घाटों पर छाए अजीब कोलाहल को देखता हुआ मैं पिताजी के साथ डेरे पर लोट आया।

दूसरे दिन मैं अपने अभीष्ट कार्य में जुट गया। इस यात्रा में मुझे कितने ऐसे विषयों का ज्ञान हुआ, जो जीवन-यात्रा में आज भी उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। जब कभी अवसर मिले, यात्रा अवश्य करनी चाहिए।